□□□□ □□□□

जनसत्ता 12 अगस्त, 2014 : हमारे देश में तकरीबन सभी पदों पर प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से नियुक्ति का अधिकार कार्यपालिका के पास है,

चाहे वे चुनाव आयुक्त हों, मुख्य सतर्कता आयुक्त हों, सीबीआइ या आइबी के निदेशक हों या फिर अन्य दूसरे अहम पद। राष्ट्रपति का चुनाव भले ही सांसद और विधायक करते हों लेकिन उनकी उम्मीदवारी पर मुहर तो राजनीतिक दल का मुखिया ही लगाता है। प्रतिभा पाटील को तो सोनिया गांधी ने ही नामित किया था और वे भारत की राष्ट्रपति बनीं भी। पर □ क महकमा ऐसा है जहां कि कार्यपालिका की नहीं चलती। वह है उच्च न्यायपालिका।

हाइकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट के जजों की नियुक्ति का अधिकार जजों की □ क समिति के पास है जिसे कॉलेजियम कहते हैं। सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश इस समिति के अध्यक्ष होते हैं और चार अन्य वरिष्ठतम जज इसके सदस्य। कॉलेजियम की यह व्यवस्था करीब दो दशक से हमारे देश में लागू है। कॉलेजियम बनाने का उद्देश्य यह था कि न्यायपालिका को कार्यपालिका के दखल से मुक्त रखा जा सके। कमोबेश कॉलेजियम जजों की नियुक्ति में नेताओं की दखलंदाजी रोकने में काफी हद तक कामयाब रहा।

दरअसल, कॉलेजियम सर्वोच्च न्यायालय के □ क फैसले के बाद बना था। उन्नीस सौ तिरानवे में सुप्रीम कोर्ट □ डवोकेट ऑन रेकॉर्ड्स बनाम यूनियन ऑफ इंडिया के केस में सुप्रीम कोर्ट ने संविधान के अनुच्छेद 124 (2) और 217(1) की व्याख्या की थी। संविधान की इन धाराओं में हाइकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों की नियुक्ति की प्रक्रिया का उल्लेख है। सुप्रीम कोर्ट के उस वक्त के मुख्य न्यायाधीश जस्टिस जे□ स वर्मा की अगुआई वाले पीठ के उन्नीस सौ तिरानवे के फैसले की व्याख्या से साफ है कि उच्च न्यायपालिका में जजों की नियुक्ति में सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की राय को तरजीह मिलि सके।

उस वक्त कॉलेजियम-व्यवस्था के समर्थन में □ क तर्क यह भी दिया गया था कि सुप्रीम कोर्ट और हाइकोर्ट के जजों को न्यायिक प्रक्रिया की जानकारी रखने वालों के बारे में बेहतर जानकारी होती है, लिहाजा नियुक्ति में उनकी राय को अहमियत मिलनी चाहि□ □ सबसे अहम तर्क यह दिया गया था कि इससे न्यायपालिका को राजनीतिक दखलंदाजी से मुक्त रखा जा सके जो कि संविधान की मूल आत्मा में निहित है। बहुत संभव है कि कॉलेजियम की वकालत करने वालों के जेहन में इंदिरा गांधी का वह मशहूर कथन रहा हो जिसमें उन्होंने कहा था- वी वांट अ कमिटेड ज्यूडिशियरी। अस्सी के दशक में इंदिरा गांधी की इस इच्छा का उनके राजनीतिक चेलों ने जमकर सम्मान किया था। उस वक्त के कानूनमंत्री लगातार इंदिरा गांधी की बात दोहराते रहते थे और जानकारों का कहना है कि उसी हिसाब से काम भी करते थे।

पर इससे यह संदेश नहीं जाना चाहि□ कि कॉलेजियम सिस्टम लागू होने के पहले हमारी न्यायपालिका स्वतंत्र नहीं थी। कई ऐसे उदाहरण हैं जब सुप्रीम कोर्ट और हाइकोर्ट के जजों ने न्याय के उच्च मानदंडों की रक्षा की। सबसे ब□ा उदाहरण तो इलाहाबाद हाइकोर्ट के जज न्यायमूर्ति जगमोहन लाल

सिन्हा का है जिन्होंने बारह जून उन्नीस सौ पचहत्तर को अपने ऐतिहासिक फैसले में इंदिरा गांधी के लोकसभा चुनाव को रद्द करते हुए उन्हें अगले छह वर्षों तक किसी भी संवैधानिक पद के लिए अयोग्य घोषित कर दिया था। बाद में जब मामला सुप्रीम कोर्ट पहुंचा तो न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने न्यायमूर्ति जगमोहन लाल के फैसले पर रोक लगा दी लेकिन उन्होंने भी इंदिरा गांधी को संसद में मतदान के अधिकार से वंचित कर दिया था।

ये दोनों फैसले देश में इमरजेंसी का आधार बने। उस वक्त इंदिरा गांधी के वकील रहे वीएन खरे बाद में सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश बने थे। अब अगर हम इतिहास से निकल कर वर्तमान में आएं तो यूपीए के दूसरे दौर के शासनकाल में तमाम घोटालों पर सुप्रीम कोर्ट के रवैये से सरकार परेशान रही। यहां भी अदालत का रुख यूपीए सरकार की रुखसती के कारणों में से एक बना।

कहना न होगा कि आजादी के बाद से हमारे देश की न्यायपालिका कमोबेश कार्यपालिका और विधायिका के दबाव से आजाद रही है और उसने न्याय के उच्चतम मानदंडों की स्थापना की है। लेकिन कॉलजियिम सिस्टम के बाद भी जजों के चुनाव में गलतियां होती रही हैं। समय-समय पर कई जजों पर भ्रष्टाचार के इल्जाम लगे हैं। कोलकाता हाइकोर्ट के जज सौमित्र मोहन और कर्नाटक के मुख्य न्यायाधीश पीडी दिनाकरन पर भी इस तरह के आरोप लगे थे। दोनों के खिलाफ महाभियोग की प्रक्रिया चली थी।

आजाद भारत के न्यायिक इतिहास में तीन ही मौके हैं जब किसी भी जज के खिलाफ महाभियोग की प्रक्रिया शुरू की गई थी। पहले वी रामास्वामी के खिलाफ संसद में महाभियोग की प्रक्रिया चली, तब कांग्रेस सांसदों के सदन का बहिष्कार करने से महाभियोग का प्रस्ताव गिर गया था।

इन दिनों सुप्रीम कोर्ट के पूर्व न्यायाधीश मार्कंडेय काटजू एक के बाद एक खुलासा कर रहे हैं और दावा कर रहे हैं कि उच्च न्यायपालिका में भ्रष्टाचार को देश के मुख्य न्यायाधीश रोक नहीं पाए। हालांकि काटजू जिन हालात का बयान कर रहे हैं उनमें नाटकीयता का भी पुट भी है और उनके खुलासे के वक्त लेकर भी सवाल उठे हैं। पूर्व कानूनमंत्री हंसराज भारद्वाज अपने कई टीवी इंटरव्यू में काटजू की सुप्रीम कोर्ट में नियुक्ति की बाबत उस वक्त के मुख्य न्यायाधीश रहे वाइके सब्बरवाल से बात करने को कह कर कुछ इशारा करते रहे हैं।

दरअसल, माननीय न्यायाधीशों पर इस तरह के आरोपों से देश की जनता का न्यायपालिका पर से विश्वास दरकने लगा है। भारत के लोगों की अपने देश की न्यायपालिका की ईमानदारी और साख पर जबरदस्त आस्था है। यह आस्था भारतीय लोकतंत्र को मजबूती प्रदान करती है। जजों पर भ्रष्टाचार के आरोपों के खुलासे से जन की इस आस्था को चोट पहुंचती है जो अंततः जनतंत्र पर ही चोट पहुंचाती है। इसलिए किसी न्यायाधीश पर किसी भी तरह का आरोप लगाने से पहले ठोंक-बजा कर तथ्यों को पुख्ता कर लेना चाहिए।

इसी पृष्ठभूमि में देश के कई विद्वान वकीलों और पूर्व न्यायाधीशों ने कॉलजियिम सिस्टम को नाकाम करार दिया है। लिहाजा, सरकार को एक बार फिर से न्यायिक सुधार विधेयक की याद आई और इस दिशा में प्रयत्न शुरू हो गया है। राजग सरकार ने जो फॉर्मूला निकाला है उसके हिसाब से अब हाइकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट में जजों की नियुक्ति छह सदस्यीय न्यायिक नियुक्ति आयोग करेगा। सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश, सुप्रीम कोर्ट के ही दो वरिष्ठ जज, कानूनमंत्री और दो मशहूर न्यायविद इस आयोग के सदस्य होंगे।

नए विधेयक के मुताबिक आयोग में दो न्यायविदों की नियुक्ति प्रधानमंत्री, मुख्य न्यायाधीश और नेता-विपक्ष की तीन सदस्यीय समिति करेगी। विधेयक के

मुताबकि अगर छह सदस्यीय आयोग के दो सदस्य कसिी भी उम्मीदवार के चयन से सहमत नहीं हैं तो उनका नाम राष्ट्रपत िके पास नहीं भेजा जा□गा□ नयिुक्त िके लि□ कम से कम पांच सदस्यों की सहमत िआवश्यक की गई है□ अब पेच यहीं से शुरू होता है□ संवधिान कहता है क िहाइकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट में न्यायाधीशों की नयिुक्त िमें सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश की राय को वरीयता (प्राइमेसी) होगी□

कल्पना कीजि□ क िकसिी भी जज की नयिुक्त िके वक्त पांच सदस्य सहमत हैं और सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश उनसे असहमत हैं तो क्या होगा□ क्या सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश की राय को दरकनिार करते हु□ पांच सदस्यों की राय पर जज की नयिुक्त िके लि□ राष्ट्रपत िको संस्तुत िकर दी जा□गी□ अगर ऐसा होता है तो राष्ट्रपत िके सामने ब□ा संकट ख□ा हो जा□गा□ राष्ट्रपत िइस मसले पर प्रेसडिेंशयिल रेफरेंस के तहत फरि से सुप्रीम कोर्ट की राय मांग सकते हैं□ वहां जाकर □क बार फरि से मामला फंस सकता है□

अब इसका दूसरा पहलू देखि□□ भले ही जजों की नयिुक्त िके लि□ सरकार आयोग बनाने जा रही है लेकनि प्रस्तावति नयिमों के तहत न्यायाधीशों की मर्जी के मुताबकि कुछ हो नहीं सकता□ आयोग में तीन सुप्रीम कोर्ट के जज होंगे और नयिम कहता है क िअगर दो सदस्य कसिी की उम्मीदवारी पर असहमत हैं तो उसके नाम की संस्तुत िनहीं होगी□ ऐसे में समत िमें कानूनमंत्री और दो अन्य न्यायवदिों की राय का कोई अर्थ नहीं रह जा□गा □

दूसरी सबसे ब□ी खामी जो इस वधियक में है वह यह क िइस आयोग को हाइकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट के जजों की संस्तुत िका अधकिार है, लेकनि अगर राष्ट्रपत िकसिी नाम को पुनर्वचिार के लि□ भेजते हैं तो उस नाम को फरि से राष्ट्रपत िके पास भेजने के लि□ सभी छह सदस्यों को □कमत होना चाहि□□ कसिी भी □क सदस्य की राय अगर अलहदा है तो उस नाम को दोबारा राष्ट्रपत िके पास नहीं भेजा जा सकता□ इसका मतलब यह हुआ क िअगर सरकार, जसिका आयोग में प्रतनिधित्वि कानूनमंत्री करेंगे, को कसिी के नाम पर आपत्त िहै तो उसकी नयिुक्त िसुप्रीम कोर्ट या हाइकोर्ट के जज के तौर पर नहीं हो सकती□ क्योंक ितब सरकार राष्ट्रपत िको कसिी नाम पर पुनर्वचिार की सलाह दे सकती है और फरि कानूनमंत्री आयोग की बैठक में उस व्यक्त िके खलिाफ अपनी राय रख सकते हैं□

इसका मतलब साफ है क िसरकार जजों की नयिुक्त िका अधकिार प्रकारांतर से अपने पास रखना चाहती है□ कानूनमंत्री की मर्जी के बगैर कोई भी जज नयिुक्त नहीं हो सकता□ इस तरह से देखें तो संवधिान के तहत सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश को प्राइमेसी का जो अधकिार है उसका भी अतकि्रमण होगा□ कॉलजियिम सस्टिम पर उठ रहे सवालों और इसे बदलने की न्यायवदिों की मांग के बीच इन बदिुओं पर गंभीरता से वचिार करने की आवश्यकता है□ इस बात का भी ध्यान रखा जाना चाहि□ क िन्यायपालकि को संवधिान में प्रदत्त अधकिारों का हनन न हो□ कसिी भी व्यवस्था को उससे बेहतर व्यवस्था से ही बदला जाना चाहि□□

फेसबुक पेज को लाइक करने के लि□ क्लकि करें- https://www.facebook.com/Jansatta

ट्वटिर पेज पर फॉलो करने केलि क्लकि करें- https://twitter.com/Jansatta